AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

राजेन्द्र माथुर हिंदी पत्रकारिता के मूर्धन्य पत्रकारः एक विश्लेष्णात्मक अध्ययन

संजय द्विवेदी,
शोधार्थी, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय,
छत्तीसगढ़, भारत

डॉ. गोपा बागची,
विभागाध्यक्ष, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय,
छत्तीसगढ़, भारत

शोध सार

मूर्धन्य पत्रकार राजेंद्र माथुर के लेखन की समय सीमा तय नहीं की जा सकती। वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितने तब थे। वे कहते थे–'यदि देश किन्ही दो बुनियादों पर टिका है तो वह राजनेताओं पर कम और न्यायपालिका तथा पत्रकारिता पर ज्यादा, क्योंकि जब कहीं आशा नहीं रह जाती तो निराश व्यक्ति या तो अदालत का दरवाजा खटखटाता है या फिर अखबार के दफ्तर में जाता है। उसे लगता है यहाँ से न्याय जरूर मिल जायेगा। इस अपेक्षा और उम्मीद को बनाये रखने के लिए उन्होंने हमेशा जिम्मेदार और मूल्यानुगत पत्रकारिता की।हालांकि वे मूलतः प्राध्यापक थे और यह प्राध्यापकीय वृत्ति उनके समूचे लेखन में दिखती है। उनका लेखन तथ्यों और संदर्भों पर आधारित होते थे। उनकी भाषा में एक अकादमिक सौंदर्य था जो उन्हें उनके समकालीन पत्रकारों से अलहदा बनाता है। वे साहित्य की किसी खास परंपरा से नहीं आते जबकि उस वक्त साहित्यकार–संपादकों का बोलबाला था।'उस दौर में लगभग सभी प्रमुख संपादक हिंदी के बड़े साहित्यकार थे जिनमें धर्मवीर भारती (धर्मयुग), सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' (नवभारत टाइम्स एवं दिनमान), रघुवीर सहाय (दिनमान), कमलेश्वर (सारिका), राजेंद्र अवस्थी (कादंबिनी) के नाम उल्लेखनीय हैं और राजेंद्र माथुर भी लेखक–संपादक थे।'[1] अपने लेखन के कारण ही वह कालजयी संपादक कहे जाते हैं।

मुख्य शब्द

मूल्यानुगत, संपादक, पत्रकारिता, विचारधारा, राष्ट्र।

राजेंद्र माथुर एक ऐसे संपादक हैं जो अंग्रेजी की शिक्षा से जुड़े थे। वे अंग्रेजी के प्राध्यापक रहे और उसके बाद पूर्णकालिक पत्रकारिता में आए। ऐसे में वे हिंदी की परंपरा के या उसकी साहित्य की धारा से बहुत जुड़े हुए नहीं थे। इसके नाते हिंदी का वह भाव बोध जो परंपरा से उसे प्राप्त था उससे वे अलग दिखते हैं। यह उनकी शक्ति भी थी और यही उनकी सीमा भी थी। वे पंडित जवाहरलाल नेहरू की भांति विदेशी विचारधाराओं से खासे प्रभावित थे। उन्हें कई बार इसीलिए नेहरूवादी भी कहा गया। कांग्रेस की स्वदेशी धारा जिसका नेतृत्व महात्मा गांधी करते थे उससे अलग एक धारा और थी जिसे नेहरूवाद कहा गया। इस धारा पर विदेशी विचारधाराओं, विदेशी राष्ट्रों की प्रगति के तौर–तरीकों, उनके विकास माडल, औद्योगिकीकरण का गहरा असर था। राजेंद्र माथुर भी इसी वैचारिक सरणी के एक नायक या विचारक सरीखे दिखते हैं। संभव है कि यदि उन्होंने संस्कृत का भी और भारतीय परंपराओं का भी अध्ययन किया होता या उसमें उनकी रुचि होती तो वे शायद ज्यादा व्यापक दृष्टि रख पाते। विचारधारा के इन्हीं आग्रहों तथा नेहरूवाद के प्रभाव ने उन्हें भारत की मूलभूत संस्कृति, उसकी परंपरा और उसकी जड़ों से उस प्रकार साक्षात्कार नहीं कराया जैसा उनके समानांतर प्रभाष जोशी जैसे पत्रकार कर पाए। सृजनगाथा डॉट काम के संपादक जयप्रकाश मानस कहते हैं कि "श्री माथुर ने भारत राष्ट्र के प्रति गहरा प्रेम मौजूद है। किंतु वे भारत के सांस्कृतिक अवचेतन से साक्षात्कार न होने के नाते उस प्रकार से स्वयं को व्यक्त नहीं कर पाते जिस तरह प्रभाष जोशी ने खुद को व्यक्त किया है। प्रभाष जी जहां परंपरा और आधुनिकता दोनों को साधते हैं वहीं अंग्रेजी पृष्ठभूमि

के प्रभाव के नाते और नेहरूवादी सोच के चलते श्री माथुर एक अलग राह पकड़ लेते हैं। राजेंद्र माथुर के समूचे लेखन में नेहरू की एक लंबी छाया है और वे उनसे और उनके विचारों से मुग्ध दिखते हैं। एक पत्रकार के नाते उनकी टिप्पणियां बहुत मौलिक और हिंदी में शायद पहली बार हैं। सही मायने में उन्होंने हिंदी पत्रकारिता को अंग्रेजी के मुकाबले खड़ा किया, जबकि इसके पहले यह माना जाता था कि हिंदी के विचार पृष्ठ या संपादकीय पृष्ठ वैचारिक रूप से कमजोर होते हैं। किंतु राजेंद्र माथुर ने हमें यह गौरव भी दिलाया कि उनके लेख अनूदित होकर अंग्रेजी पत्रों में छपे। उनकी विचारधारा को समझ पाना मुश्किल है। वे कांग्रेस के कड़े आलोचक दिखते हैं किंतु नेहरू के करीब नजर आते हैं। यह उनके लेखन में साफ दिखता है। आलोक मेहता जैसे उनके करीबी लोगों ने उन्हें नेहरूवादी कहा है'।[2]

इस बात की ताकीद अमेरन्द्र कुमार राय भी अपने लेख में करते हैं। वे लिखते हैं कि "वैचारिक तौर पर लोग माथुर साहब को कांग्रेस का करीबी करार देते हैं, लेकिन आलोक मेहता जैसे उनके करीबी लोग उन्हें नेहरूवादी कहते हैं। उनका कहना है कि राजेंद्र माथुर नेहरू से प्रभावित थे। उनकी लेखनी भी नेहरू से ही प्रभावित थी। उन्होंने विपक्ष के साथ–साथ कांग्रेसियों की भी खूब आलोचना की। उन्होंने 'नवभारत टाइम्स' का संपादक रहते हुए अगर रथयात्रा पर हमला किया तो वी.पी. सिंह के मंडल को भी नहीं बख्शा। कांग्रेस में अगर कोई गलत करता था तो वे उसकी भी तीखी आलोचना करते थे। हिमाचल के कांग्रेसी मुख्यमंत्री को तो उन्होंने 'लकड़ी चोर रामपाल' तक लिखा। आलोक मेहता बताते हैं कि अर्जुन सिंह जैसे बड़े कांग्रेसी नेता के केरवा महल को लेकर उनके खिलाफ बहुत कुछ छपा, लेकिन माथुर साहब ने कभी रोकने की कोशिश नहीं की।

राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह के खिलाफ भी उस दौरान खूब छपा। उनके पर्सनल सेक्रेटरी त्रिलोचन सिंह ने 'नवभारत टाइम्स' में इसकी शिकायत भी की, पर माथुर साहब ने किसी की कोई बात नहीं सुनी। माथुर साहब के खुद कांग्रेस के दिग्गज नेता नारायण दत्त तिवारी से बहुत अच्छे सम्बन्ध थे जबकि उन्हें अखबार में आलू तक लिखा गया। सरकार और कांग्रेस नेताओं की ही बात नहीं है, बल्कि मालिकों के स्तर पर भी इस मामले में वे समझौता नहीं करते थे। चंद्रास्वामी से शांति प्रसाद जैन के पारिवारिक रिश्ते थे, लेकिन माथुर साहब के समय में चंद्रास्वामी के खिलाफ 'नवभारत टाइम्स' में खूब छपा'।[3]

राजेंद्र माथुर के बारे में यह भी कहा जाता है कि उन्होंने समाचारों से ज्यादा विचारों की तरफ ध्यान दिया। इस तरह वे विचार की पत्रकारिता को ज्यादा तरजीह देते थे। इस अर्थ में हम यह कह सकते हैं कि संपादक को विचार और समाचार में अपेक्षित संतुलन रखने की आवश्यकता होती है। जयप्रकाश मानस कहते हैं कि "एक संपादक अपने पाठकों के लिए जिम्मेदार होता है। उसकी यह जिम्मेदारी है कि वह समाचार और विचार दोनों में संतुलन बनाकर चले। किंतु ऐसा देखा जाता है कि कुछ पत्रकार जो रिपोर्टिंग के क्षेत्र से आते हैं वे खबरों में डूब जाते हैं और जो वैचारिक धरातल से मजबूत होते हैं उनका सारा ध्यान विचार पृष्ठ पर या संपादकीय पृष्ठ पर ही होता है। यहां पर दो संपादकों के इस अंतर को समझा जा सकता है। राजेंद्र माथुर जहां विचार के पक्ष में खड़े दिखते हैं, वहीं सुरेंद्र प्रताप सिंह खबरों को लेकर ज्यादा चौतन्य नजर आते हैं। शायद इसीलिए नवभारत टाइम्स ने बाद में इस जोड़ी का उपयोग साथ–साथ किया ताकि समाचार और विचार में अपेक्षित संतुलन स्थापित किया जा सके। साथ ही साथ पाठकों को न्याय मिल सके'।[4]

इस बात की पुष्टि सांध्य टाइम्स के संपादक रहे संत सोनी भी करते हैं। उनके अनुसार माथुर का जोर विचारों पर ज्यादा था। वे लिखते हैं "माथुर साहब जिस बात के लिए बरसों तक याद किए जाएंगे, वह थी उनकी सोच।' वे जानते थे कि सब कुछ खत्म होने के बाद भी एक ही चीज बची रहती है और वह है विचार। संस्कृति हो या साहित्य, धर्म, समाज हो या राजनीति, वह उनकी चुनौतियों और उनसे उपजने वाले संकटों को भांप लेते थे। उनकी सोच शब्दों में ढलकर पाठकों तक पहुंचने लगी तो ऐसा लगा कि एक विचार का आंदोलन शुरू हो गया। हिंदी का यह संपादक अपने विचारों और विशिष्ट शैली के रूप में अपने पीछे एक समृद्ध विरासत छोड़ गया है'।[5]

राजेंद्र माथुर के सहयोगी रहे वरिष्ठ पत्रकार राजकिशोर ने राजेंद्र माथुर की संपादकीय सीमाओं का उल्लेख

करते हुए लिखा है कि "माथुर साहब व्यक्ति के रूप में अच्छे, विचारवान एवं शालीन इंसान थे। उन्होंने संपादकीय एवं विचार आलेखों वाले पृष्ठों को पठनीय एवं श्रेष्ठ बनाया, लेकिन उन्होंने पूरे अखबार को संपादित करने की कोशिश नहीं की। उनकी ज्यादातर कोशिशें संपादकीय तक ही सीमित रहीं। अखबार का काम समाचारों का विश्लेषण करना जरूर है, लेकिन उसका पहला काम है समाचार देना। वे यह मानते हैं कि माथुर साहब के समय रविवारीय अच्छा नहीं निकलता था। तब रविवारीय कन्हैयालाल नंदन देख रहे थे। नंदन जी से राजेन्द्र माथुर ने यह बात कही भी कि लोग कहते हैं कि रविवारीय अच्छा नहीं निकल रहा। इस पर नंदनजी ने उसी समय रविवार का ताजा अंक निकाला और उनके सामने कर दिया। रविवारीय के पहले पन्ने पर अमृता प्रीतम, अज्ञेय और अमृतलाल नागर छपे हुए थे। नंदन जी ने कहा कि अगर रविवारीय अच्छा नहीं निकल रहा तो इसमें जितना योगदान कन्हैयालाल नंदन का है, उतना ही योगदान अमृता प्रीतम, अज्ञेय और अमृतलाल नागर का भी है।

शोधकर्ता और पत्रकार अमरेन्द्र कुमार राय भी इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि "माथुर साहब निश्चित रूप से बड़े संपादक थे, लेकिन राजकिशोर की यह बात भी सच है कि उनकी छाप सिर्फ संपादकीय पेज पर ही दिखती है, जबकि संपादक की छाप पूरे अखबार पर दिखाई देनी चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजेंद्र माथुर की पत्रकारिता में तो विषयों की व्यापकता है और वे विविध विषयों पर समान अधिकार से लिखते हैं। यह अलग बात है कि विदेशी मुद्दों पर उनकी कलम ज्यादा पैनी और प्रखर है। जहां तक उनके संपादक होने की बात है उनके संपादकीय प्रबंधन में कुछ विषयों का समावेश होता तो वे ज्यादा प्रभावी संपादक साबित हो सकते थे। इस अध्ययन से उनकी निम्न सीमाएं रेखांकित की जा सकती हैं। लेकिन उन्हें समाचारपत्र के संपादक के नाते विचार और समाचार पक्ष दोनों को समान महत्व नहीं मिल सका।

निष्कर्ष

एक संपादक की छाप पूरे समाचारपत्र पर दिखनी चाहिए किंतु राजेंद्र माथुर संपादकीय पृष्ठ पर ज्यादा प्रभावी दिखते हैं। बेहतर लेखन कला के बावजूद पूरे अखबार को संपादित करने और एक लय में लाने की कोशिश का थोडा अभाव दिखता है। उनके लेखन में सिर्फ समाचार देना या विश्लेषण ही नहीं होता था बल्कि वे खबरों के पीछे छिपे अर्थ की तलाश भी कर लेते थे। उनके लेखन में कुशलता तो थी लेकिन कई जगहों पर नेहरू का प्रखर विरोध करने वाली राजनीतिक शक्तियों (समाजवादी तथा जनसंघ के नेता) के प्रति पूर्वाग्रह भी दिखता है। अपने तमाम लेखों में राजेंद्र माथुर ने एक संपूर्ण हिंदी समाचारपत्र निकालने की चिंताएं व्यक्त की हैं। किंतु वे नवभारत टाइम्स को एक संपूर्ण अखबार नहीं बना सके। उन्होंने समाचारपत्र के विस्तार का प्रयास जरूर किया जिससे उनके कार्यकाल में उसके तीन संस्करण लखनऊ, पटना और जयपुर प्रारंभ हुए। राजेंद्र माथुर प्रधान संपादक रहे, उसमें ऐसे गणमान्य पत्रकार बहुत थे जो साहित्यकार या विचारक के रूप में पहचाने जाते थे। संपादक पूरी टीम का कप्तान कहलाता है और वे इस मामले में सिरमौर बने रहे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. द्विवेदी, संजय, (2006), *यादें: सुरेंद्र प्रताप सिंह*, रायपुर, वैभव प्रकाशन.पृ. 19।
2. सृजनगाथा डॉट कॉम के संपादक जयप्रकाश मानस से बातचीत पर आधारित (दिनांक 13–11–2014)
3. मिश्र, अच्युतानंद, (2010), हिंदी के प्रमुख समाचारपत्र और पत्रिकाएं, खंड– 3, नई दिल्ली. सामयिक प्रकाशन. पृ. 41
4. सृजनगाथा डॉट कॉम के संपादक जयप्रकाश मानस से बातचीत पर आधारित (दिनांक 13–11–2014)
5. मिश्र, अच्युतानंद.(2010).हिंदी के प्रमुख समाचारपत्र और पत्रिकाएं.खंड– 3,नई दिल्ली. सामयिक प्रकाशन.पृ. 41–42

––==00==––